मराठी घुमंतू समुदाय के गीतों द्वारा प्रबोधन

पूनम शर्मा[1]
पीएच.डी. शोधार्थी (हिंदी),
उच्च शिक्षा और शोध संस्थान,
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा मद्रास
त्यागराय नगर, चेन्नै- ६०० ०१७
संतोष वसंत कांबले[2]
पीएच.डी. शोधार्थी (हिंदी)
कवयित्री बहिणाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र
विश्वविद्यालय, जलगाँव
मोबाईल क्रमांक- ८१२५९ ८११९४
ई-मेल : shreyashju@yahoo.co.in

सारांश

घुमंतू जातियों के द्वारा समय-समय पर स्थान-स्थान पर भ्रमण करते हुए न केवल अपनी लोक-संस्कृति का विस्तार करने का कार्य पूर्ण किया गया अपितु इनके द्वारा समाज को अन्य विभिन्न जन संस्कृतियों को जानने व समझने का भी अवसर प्रदान किया | इन जातियों के द्वारा न केवल मनोरंजन जैसा कार्य किया जाता है अपितु विचारों व लोक-संस्कृति के प्रचार-प्रसार जैसा महत्वपूर्ण कार्य भी संपन्न हो जाता है |

बीज शब्द- घुमंतू, समुदाय, संस्कृति, समाज।

प्रस्तावना

वे लोग जिनका कोई निवास स्थान स्थायी रूप से नहीं होता और जिसके कारण ऐसे लोग सदैव एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते हैं तथा अस्थायी निवास बनाकर कुछ समय व्यतीत कर अन्य स्थान हेतु निकल पड़ते हैं उन्हें घुमंतू की संज्ञा प्रदान की जाती है | इन्हें खानाबदोश, घुमंतू, बंजारा, बनजारा, लँबाड़ा, वंजारा तथा वनजारा आदि नामों द्वारा जाना जाता है |

घुमंतू शब्द का अर्थ है- घुमक्कड़ | ऐसे लोग जो बिना किसी कारण के यहाँ-वहाँ घूमते हैं अर्थात वे विशेष जाति जिनका कोई स्थायी निवास निर्धारित नहीं होता और अजीविका की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमा करते हैं ऐसा घूमना इनका शौक नहीं अपितु विवशता के कारण होता है | घुमंतू भारतीय समाज का अत्यंत उपेक्षित और पिछड़ा वर्ग है |

कालबेलिये, नट, भांड, पारधी, बहुरूपिये, सपेरे, मदारी, कलंदर, बहेलिये, भवैया, सांसी, कंजर, रेबारी, कुचबंदा, सिकलीगर, गाड़िया लुहार, गुज्जर तथा वणजारे आदि जैसी सैकड़ों घुमंतू जाति के अंतर्गत आने वाली जातियाँ हैं |

शायर अरराल-उल-हक़ मजाज़इन विमुक्त घुमंतू जनजातियों का दर्द बयां करते हुए लिखते हैं कि-

"बस्ती से थोडी दूर, चट्टानों के दरमियां
ठहरा हुआ है, खानाबदोशों का कारवां
उनकी नहीं जमीन, न उनका कहीं मकां
फिरते हैं यू ही शामों, सहर ज़ेरे आसमां |"[i]

हमारा महान भारतवर्ष विभिन्न लोक-संस्कृतियों से संपन्न है जो इसकी गरिमा को और अधिक महत्ता प्रदान करती है, यहाँ अनेक संस्कृतियों की अपनी एक अनुपम पहँचान है जिसमें से एक है मराठी संस्कृति | मराठी संस्कृति अपने अनुपम वैशिष्ट्य के कारण महत्त्वपूर्ण मानी जाती है जिसकी लोक-संस्कृति ने इसे और अधिक महत्ता प्रदान की है | मराठी लोक-संस्कृति के अंतर्गत आनेवाले कुछ प्रमुख घुमंतू जातियों के गीतों द्वारा समाज में समय-समय पर प्रबोधन कार्य किया गया | वर्तमान समय में गाँवों में

और कहीं-कहीं शहरों में ऐसे उपासक दिखाई देते हैं जिनके गीत लोकजीवन में आज भी प्रचलित हैं | ये उपासक अपने गीत वैशिष्ट्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करते हैं | लोगों के ऊपर संस्कार करना और उनका मनोरंजन करना इन उपासकों के गीतों का मुख्य उद्देश्य होता है | कुछ प्रमुख मराठी घुमंतू जातियाँ अग्रलिखित हैं-

वासुदेव-

मराठी घुमंतू समुदाय के अंतर्गत वासुदेव आज भी गाँवों में और शहरों में दिखाई देते हैं | यह समुदाय सुबह के मंगलमय वातावरण में पारंपरिक गीत गाते हुए, दान माँगते हुए घूमते नज़र आते हैं | इनके सिर पर मोर के पंखों की आकर्षक टोपी, पैरों में घूँगरू, हाथ में टाल लेकर बाँसुरी बजाने वाला वासुदेव प्राचीन लोक-संस्था है जिसके कई अस्पष्ट उल्लेख मिलते हैं | संत एकनाथ, संत नामदेव, संत तुकाराम आदि ने वासुदेव समुदाय के ऊपर अनेक गीत रचे हैं | इन संतों ने वासुदेव का उपयोग सर्व सामान्य लोगों तक अपना उपदेश पहुँचाने के कार्यार्थ किया | भगवान के नाम से दान माँगने वाला वासुदेव दान मिलने पर अपने शरीर का एक चक्कर काटता है और दान मिलने का गाना गाता है | जैसे-

"दान मिल गया…. दान मिल गया
पंढरपुर में…. इठोबा राया को
कोल्हापुर के …. अंबाबाई को"[ii]

संतों के द्वारा गाये गये ये गीत समाज को वासुदेव समुदाय के द्वारा लोगों को अहंकार त्याग कर भक्ति मार्ग पर चलने का मार्ग प्रशस्त करते हैं तथा ब्रह्मानंद की प्राप्ति का सहज मार्ग दर्शाते हैं |

यह मराठी घुमंतू वासुदेव समुदाय लोगों के घर-द्वार पर जाकर धर्मोपासना और लोकशिक्षा का कार्य अपने नृत्य, नाट्य तथा संगीत के माध्यम से करते हैं जो इतना आकर्षक होता है कि सभी जन उनको मंत्रमुग्ध होकर सुनते हैं | श्रीकृष्ण भक्ति की महिमा का वर्णन वे अपने गीतों के माध्यम से करते हैं तथा हमारे पौराणिक आदर्श पात्रों के गुणों को गाकर उनकी महानता का व्याख्यान प्रस्तुत करते हैं | वासुदेव समुदाय के गीतों का प्रमुख विषय श्रीकृष्ण की लीलाएँ तथा तुलसी पर आधारित गाये जाने वाले गीत माने जाते हैं | वासुदेव द्वारा गीत गाते समय का पदान्यास और मुद्राभिनय अत्यंत वैशिष्ट्यपूर्ण होता है जिसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे एक पात्री प्रयोग चल रहा है | यह लोकाख्यान गायक समुदाय घुमक्कड़ भजन गायक समुदाय माना जाता है जिनके द्वारा न केवल स्थानीय वाचिक परंपरा के भंडार, संरक्षक व प्रसारक की भूमिका अदा की जाती है अपितु वे अपनी भावी पीढ़ियों को भी अपनी यह कला हस्तगत कर एक कला संवाहक की भूमिका का निर्वाह अपने गीतों के माध्यम से करते हैं | इन मराठी घुमंतू वासुदेव समुदाय के गायकों ने लिखित-अलिखित कथानकों को स्थानीय बोलियों में सहज ग्राही बनाकर जिस प्रकार से प्रस्तुत किया है वह सराहनीय कार्य है | कथानक की मूल कथा को अक्षुण्य रखकर स्थानीय बोलियों में उसका अनुवाद कर उसे और अधिक सरस बनाने हेतु उसमें भजन अथवा गीतों के अंशों का समावेश करने जैसा जो महत्त्वपूर्ण कार्य इन समुदायों ने किया वह प्रशंसनीय है | इनके द्वारा स्वनिर्मित तम्बूरा और सारंगी जैसे सामान्य वाद्य यंत्रों को संगीत लहरीं पर पारंपरिक संयोजित गायकी द्वारा अत्यंत भक्ति भाव द्वारा अपनी प्रस्तुति को दर्शाया गया |

पांगुल-

मराठी लोक-संस्कृति के अंतर्गत घुमंतू समुदायों में से एक प्रमुख पांगुल समुदाय माना जाता है जो अत्यंत प्राचीन है तथा दक्षिण महाराष्ट्र क्षेत्र में दिखाई देता है | यह समुदाय अधिकांशतः महाराष्ट्र की उपजाऊ भूमि वाले प्रदेश अथवा गाँव-गाँव में भीख माँगकर अपना जीवन यापन करता है | प्राचीन मराठी वाड़मय में प्रमुखता से संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव, संत तुकाराम एवं संत एकनाथ की रचनाओं में हमें पांगुल का उल्लेख प्राप्त होता है | जैसे-

"अरे कोई अपने पूर्वजों के नाम पर राम प्रहर में धर्म कीजिए |
कोई अपने देवी-देवताओं के नाम पर वस्त्र दान कीजिए |

कोई पुण्य कमाने के लिए पांगुल को रूपये दान कीजिए |"[vi]

यह पांगुल घुमंतू समुदाय स्वयं को सूर्यदेव का उपासक एवं सेवक मानता है | पांगुल समुदाय को 'प्रभात का दूत' भी कहा जाता है क्योंकि यह समुदाय अपने स्वामी अर्थात सूर्यदेव के आगमन की सूचना देने जैसा महत्त्वपूर्ण कार्य करता है | महाराष्ट्र में महिलाएँ सूर्य के रथ का चित्र रेखांकित करते समय उसका एक ही चक्र निकालती हैं | अरूणोदय की सूचना प्रदान करते हुए पांगुल द्वारा लोगों को जगाया जाता है तथा इन पांगुल घुमंतू लोगों के द्वारा सत्प्रवृत्ति का आह्वान किया जाता है | पांगुलों की पारंपरिक वेशभूषा के अंतर्गत कमर पर लंगोट, कंधे पर कंबल, सिर पर अलग-अलग रंग के कपडों से सिले हुए त्रिशंकु के आकार वाली टोपी, एक झोली तथा एक हाथ में घूँगरू वाली लाठी होती है | ये लोग अपना पेट भरने के लिए स्थान-स्थान पर जाकर याचना करते हैं तथा दान प्राप्त होने पर हर्ष व्यक्त करते हैं |

नाथ जोगी-

मध्ययुग में उत्पन्न नाथ जोगी समुदाय को प्रमुख मराठी घुमंतू जाति के रूप में जाना जाता है | इस समुदाय के अंदर शैव, बौद्ध तथा योग की परंपराओं का समन्वय दिखायी देता है | यह हठ योग की साधना पद्धति पर आधारित है | इस संप्रदाय के स्थान-स्थान पर प्रचारित-प्रसारित करने का श्रेय गुरू गोरखनाथ जी को जाता है | इन्होंने ही योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया जिसके कारण इनके योगदान के महत्व को देखते हुए गुरू गोरखनाथ को इस पंथ का संस्थापक माना जाता है |

प्रमुख घुमंतू समुदाय के अंतर्गत भैरवनाथ के उपासकों को समाहित किया गया है जिन्हें नाथ जोगी, गोसावी अथवा डवरे गोसावी आदि नामों से जाना जाता है | इस जाति के लोग भैरव के गीत डँमरू की ताल पर गाकर, भिक्षा माँगकर अपनी अजीविका चलाते थे | तथा भिक्षा में प्राप्त सामग्री द्वारा अपना जीवन यापन करते थे | किसी परिवार में कोई मंगलकार्य होने पर भैरव की उपासना करने वाली इस घुमंतू जाति के लोगों को अमंत्रित किया जाता है तथा इस समुदाय के लोगों द्वारा 'भराड' अर्थात एक प्रकार नाट्य प्रदर्शन किया जाता हैं | 'भराड' नाट्य प्रदर्शन करने के कारण इन्हें 'भराडी' भी कहा जाता है | भराड करने हेतु दीक्षा लेनी पड़ती है | माना जाता है कि गुरु गोरखनाथ जी ने राजा भर्तरी को नाथ दीक्षा प्रदान की थी तभी से दीक्षा देने की परंपरा का प्रारंभ माना गया है |

इस घुमंतू जाति के लोग अपनी विशिष्ट वेशभूषा के कारण अपनी एक अलग पहचान रखते हैं ये कान की पाली के मध्य से कान को विधिवत छिदवाते हैं और उसमें बड़े आकार के कुंडल पहनते हैं | कुंडल को मुद्रा कहा जाता है | गले में शिंगी पहनते हैं जो ताँबे या पीतल धातु द्वारा निर्मित होती है | भगवान की उपासना करने से पहले भराडी शिंगा बजाते हैं तत्पश्चात गुरू के द्वारा भराडी के हाथ में विधिवत रूप से भिक्षापात्र प्रदान किया जाता है इस भिक्षापात्र को 'दाबर' कहा जाता है | ऐसा माना गया है कि दाबर की प्राप्ति होने पर भराडी को जीवन पर्यंत भिक्षा माँगकर ही अपनी अजीविका चलानी होती है |

भराड में भैरव के संदर्भ में गीत गाये जाते हैं | भराड रूपी कथागीत गद्यपद्यात्मक होते हैं | इन गीतों को गाते समय डँमरू, तुणतुणे आदि वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता है | अंत में आरती की जाती है तथा भार उतारने की क्रिया विधि-विधान द्वारा संपन्न होती है | भराड में यह जाति विभूति का प्रयोग भी करती है | 'भैरोबा के नाम से चांगभलं' ऐसा जयघोष करते हैं | पद और व्याख्यान प्रस्तुत करते समय नृत्य नहीं किया जाता उसके अंतर्गत सुर एवं ताल सामान्य होते हैं परंतु वातावरण संगीतमय बन जाता है | कथा गायन एवं गद्य गायन पर जोर रहता है बीच-बीच में स्वरचित संवाद भी आते हैं | उत्तर रंग नाट्यपूर्ण रहता है | भराड़ी दीक्षा के बारे में जानकारी देते हुए प्रभाकर मांडे कहते हैं, ***"शादी के पहले एक दिन दीक्षा विधि का कार्यक्रम होता है |"***[vii]

पोतराज-

मराठी लोक संस्कृति के अंतर्गत दो प्रकार के देवी-देवता माने गए हैं- १) सौम्य प्रकृति वाले २) उग्र प्रकृति वाले |

मरिआई के उपासक पोतराज का बाह्य रूप रौद्र एवं भयानक होता है | पोतराज मराठी घुमंतू समुदाय में एक प्रसिद्ध लोक कलाकार होते हैं | इन्हें महाराष्ट्र राज्य के अंतर्गत 'मरीआई' अथवा 'कड़क लक्ष्मी' के नाम से भी जाना जाता है |

पोतराज पुरूष होता है फिर भी वह महिला का वेश धारण करता है | उसके बाल बंधे होते हैं | माथे पर हल्दी और कुमकुम लगा होता है | कमर पर बहुत सी साडियाँ जोड़कर सिलाया हुआ घागरा पहनता है | जिसे 'आभारन' भी कहा जाता है | कमर पर ही घंटावाली और घूँगरू बंधी माला भी लगाई होती है | ऐसी मान्यता है कि पोतराज अपने हंटर के प्रहार से लोगों की विपत्तियों को दूर करता है और देवी-देवता की कृपा को भक्तजनों तक पहुँचाता है |

पोतराज देवी के नाम से घर-घर घूमकर पारंपरिक गीतों को गाकर भिक्षा माँगता है | इसके द्वारा प्रमुखतः हरे रंग की चोली तथा विविध रंग के परिधान धारण किए जाते हैं | मान्यता है कि मातृदेवी के उपासना क्षेत्र में पुरूषों के जाने पर प्रतिबंध होने के कारण वह स्त्री वेश धारण कर वहाँ प्रवेश प्राप्त करता है | पोतराज की पारंपरिक वेशभूषा हाथ में असूड होता है जिसके कारण वह भयावह दिखाई पड़ता है तथा बच्चे उससे डरते हैं | महिलाएँ देवी का भक्त मानकर उसकी पूजा करती हैं तथा उसे धान प्रदान करती हैं | लोगों की धारणा है कि मरिआई के ये उपासक गाँव पर आने वाले संकट से गाँव तथा गाँव वालों की रक्षा करते हैं |

आभारन, गेनमाल, कोरडा, हलगी, भंडारा, वाकी, अंबाबाई की माला, लंगन, घागरमाल व घूँगरू पोतराज की पवित्र वस्तुएँ मानी जाती हैं | कर्पूर खाना, मुँह से अंगार निकालना, बदन पर सुई चुभवाना, भूत उतारना तथा जीभ के आर-पार सुआ निकालना जैसे चमत्कार पोतराज द्वारा किए जाते हैं |

"आ गई मरीबाई..... उसका समझ न आए अनुभव
बडे-बडों की लेती है जान..... आ गई मरीबाई ||"[ii]

ऐसा कहने वाला पोतराज कुछ गीत गाता है इन गीतों को 'वह्या' कहा जाता है | पोतराज द्वारा प्रमुख रूप से चार पंक्तियों के गीत रचे जाते हैं | मरीमाता के साथ-साथ विठ्ठल-रूक्मिणि, शंकर-पार्वती, दत्त-अनुसूया, राम-सीता आदि देवी देवताओं के भी गीत गाये जाते हैं | इसके साथ ही तीर्थ क्षेत्रों का महात्म्य वर्णन करने वाले गीत भी गाये जाते हैं |

निष्कर्ष-

मराठी घुमंतू जातियों के द्वारा समय-समय पर स्थान-स्थान पर भ्रमण करते हुए न केवल अपनी लोक-संस्कृति का विस्तार करने का कार्य पूर्ण किया गया अपितु इनके द्वारा समाज को अन्य विभिन्न जन संस्कृतियों को जानने व समझने का भी अवसर प्रदान किया | इन जातियों के द्वारा न केवल मनोरंजन जैसा कार्य किया जाता है अपितु विचारों व लोक-संस्कृति के प्रचार-प्रसार जैसा महत्वपूर्ण कार्य भी संपन्न हो जाता है |

इन विभिन्न लोक-संस्कृतियों के उपासकों के गीतों द्वारा समाज हेतु प्रबोधन कार्य संपन्न होता है | इनके द्वारा अपनाये जाने वाले गीत एवं उनके प्रस्तुतिकरण की शैली भिन्न है, गीत गाने की शैली भिन्न है, अभिनय तथा वाद्य यंत्र भिन्न है तथा वेश-भूषा व वाणी भिन्न है परंतु इन घुमंतू जातियों के द्वारा किया जाने वाला लोक-संस्कृति के विस्तार का उद्देश्य सबका एक है |

संदर्भ ग्रंथ सूची

कांबले संतोष, मराठी लोक-संस्कृति के उपासकों के गीत, स्रवंति, वर्ष-६४, अंक-३, जून- २०१९,

https://sablog.in/denotified-nomadic-semi-nomadic-tribes-and-literature/14536/ accessed on 29th December 2021, 02:09